ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 5, Issue 6, June 2018

भारतीय राजनीति का बदलता स्वरूप

Mahendra Pratap Banyala

Lecturer, Babu Shobha Ram Govt. Arts College, Alwar, Rajasthan, India

सार

भारत में लोकतंत्र है . विश्व के लोकतांत्रिक देशों की सूची में भारत का नाम भी शीर्ष स्थान पर है .जनतांत्रिक शासन में लोगों में यह भावना होती है कि जनप्रतिनिध ऐसे हों जो जनता की समस्याओं ,उनकी पीड़ा ,उनकी आवश्यकताओं को दूर करने में अग्रिम पंक्ति में हों . जन प्रतिनिधियों में सेवा भाव हो , पीड़ित को देखकर उनमें दया भाव हो और जनता के कष्ट निवारण के लिये स्वयं आगे बढने की भावना हो .गाँधी जी ने मलिन बस्ती को देख कर उसे स्वच्छ करने की भावना जागी और बिना किसी प्रदर्शन के ही रात्रि के चतुर्थ प्रहर में मलिन बस्ती में झाड़ लगा आते थे . गाँधी जी तन , मन और विचारों से समाज सेवक , राष्ट्र सेवक थे .क्या आज भी कोई समाज सेवक है जो विना प्रदर्शन के गंदी नाली या गन्दे नाले को साफ कर सकता है या फिर झाड़ू लगा सकता है ?महामना मदन मोहन मालवीय ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय स्थापित करने के लिये लोगों के सामने भीख की झोली फैलाई . आज बी एच यू विश्व स्तरीय संस्था है . मालवीय जी की यह समाज सेवा भारतीय इतिहास के पन्नों में सदैव स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगी .आज चाहे जन प्रतिनिधि हों या फिर लोक सेवक सभी प्रचार पाने की दृष्टि से कैमरे के सामने नई झाड़ू लेकर प्रदर्शन मात्र करते हैं और प्रिंट मीडिया के माध्यम से प्रचार तथा स्वच्छता का प्रमाण पत्र भी पाने में सफल हो रहे हैं .स्वच्छता समाज सेवा का प्रमुख पाठ है जिसके अभाव में अनेक बीमारियाँ फैलती हैं और जनता उससे पीड़ित होती है . नलियाँ बजबजा रही हों , बीमारी फैली हो , सडकें टूटी फूटी हों या फिर अन्य कोई अव्यवस्था हो जन प्रतिनधि कभी भी अपनी ओर से ध्यान ही नहीं देते . एक सांसद को यह कहते सुना गया कि बजबजाते हुये नाले की सफाई करवाना सांसद का काम नहीं .उसका काम संसद में कानून बनाना है .

परिचय

आज भारत में **राजनीति का क्षेत्र सबसे अधिक आकर्षक** है . आज राजनीति में चाहे उद्योगपति हों, फिल्म स्टार हो, विश्व स्तरीय खिलाडी हों या फिर लोक सेवक सभी राजनीति की ओर आकर्षित हो रहे है .आश्चर्य तब होता है एक भारतीय स्तर की सेवा से स्तीफा देकर लोकसेवक चुनाव के मैदान में कूदता है उसका मात्र एक कारण जन प्रतिनिधि का रुतबा /रुआब होना.[1]

राजनीति में आकर्षण के निम्न कारण हैं :-

1- जन प्रतिनिधि के लिये शिक्षा का कोई प्रतिबंध नहीं .

2- अधिकतम आयु का कोई प्रतिबंध न्ही.

3- समाज सेवा के अनुभव की भी जरूरत नहीं .

4- जब तक न्यायालय से सजा न हो तब तक कोई भी अपराध अयोग्यता नहीं .

5- लोक सेवकों पर रुआब रुतबा दिखाना .

आज कोई भी राजनेता या जनप्रतिनिधि अपने आप को समाज सेवक नहीं मानता .कोई भी जन प्रतिनिधि अपने क्षेत्र में जाना ही नहीं चाहता हाँ यदि किसी कार्यक्रम की अध्यक्षता करनी हो तो अलग बात है .संसद सत्र , विधान सभा / विधान परिषद की अवधि को छोड़कर जन प्रतिनिधियों को अपने क्षेत्र में जनता की समस्याओं को जानने के लिये जाना चाहिये लेकिन आज राजनीति भी बॉस सिस्टम से चल रही है . अब हर सांसद / विधायक ने अपना कार्य हल्का करने के लिये प्रत्येक सब डिविजन ,ब्लॉक ,नगर ,क्षेत्र

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 5, Issue 6, June 2018

आदि में अपने प्रतिनिधि नियुक्त कर दिये हैं जो अपने ही अनुकूल समस्यों को फोन से जन प्रतिनिधि तक पहुँचाते हैं . आज की राजनीति का सिस्टम आगे दिये रेखा चित्र से समझा जा सकता है . यह सिस्टम लोकशाही से adopted है जहाँ subordinate सिस्टम लागू है .

जन प्रतिनिधि —> ज़िला प्रतिनिधि —>सब डिविजन प्रतिनिधि —> ब्लॉक प्रतिनिधि /नगर प्रतिनिधि

हम एक उदाहरण देना चाहते हैं क़ि कानपुर देहात ज़िले में गंदगी के कारण डेंगू ने अपने पैर जमा लिये हैं लेकिन जन प्रतिनिधियों ने वहाँ जाने की जरूरत ही नहीं समझी आखिर जनता की इससे बड़ी पीड़ा और क्या हो सकती है ? डेंगू से पीड़ित और डेंगू के भय से भयातुर जन जीवन के बीच यदि जन प्रतिनिधि जाते तो यही जन प्रतिनिधि जनता में श्रद्धा के पत्र बन सकते थे .आज जनता राजनीतिक दल के लीडर को देख कर मतदान करती है और शायद इसीलिये जन प्रतिनधि जनता के बीच जाना जरूरी नहीं समझते. आज जन प्रतिनिधि समाज सेवा या तो टेलीफोन से या फिर अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से करते हैं .आज अनेक ऐसे जन प्रतिनिधि होंगे जो बंगले से निकल कर सीधे संसद / विधान मंडल की शोभा बढ़ा रहे हैं और वे प्रतिनिध हैं ग्रामीण क्षेत्र के या फिर अपरिचित भौगोलिक क्षेत्र से . एक ऐसे ही जन प्रतिनिधि हुये जो अपने भाषण में किसानों को शकर बोने की सलाह दी .हमारा कहने का यह उद्देश्य नही है कि सभी जन प्रतिनिधि समाज सेवा में रुचि नहीं लेते लेकिन समाज सेवा में रुचि लेने वालों की संख्या कम है . क्षेत्र का भ्रमण न करने वाले जन प्रतिनिधियों की संख्या निरंतर बढ रही है .[2,3]

विचार-विमर्श

ये बात तो सबको मालूम है कि भारत के लोकतंत्र में एक बुनियादी परिवर्तन आ रहा है. ये बात कई बदलावों से ज़ाहिर होती है, जिसमें चुनावी मुक़ाबले के मिज़ाज में आया संस्थागत बदलाव, मध्यम वर्ग की तादाद में कई गुने का इज़ाफ़ा, सोशल मीडिया का बढ़ता दायरा और समाज के पुराने दर्ज़ों के पतन जैसी बातें शामिल हैं. 2014 के बाद से भारतीय जनता पार्टी के सामाजिक और भौगोलिक विस्तार ने देश के राजनीतिक परिदृश्य को भी बदल डाला है. इसका नतीजा ये हुआ है कि कांग्रेस और हाशिए पर चली गई है. वाम मोर्चा लगभग ख़त्म हो गया है और राज्य स्तरीय पार्टियों की ताक़त लगातार कम होती जा रही है. बीजेपी ने चारों दिशाओं में अपना व्यापक विस्तार किया है. इससे मतदाताओं के उन समूहों में बहुत हेर-फेर देखा जा रहा है, पहले जिनका इस्तेमाल सामाजिक दरारें बढ़ाकर अपने पाले में लाने के लिए किया जाता रहा था. इसी तरह, पिछले दो दशकों के दौरान राज्य स्तर की वो विशेषताएं जो पिछले दो दशकों में चुनावी विश्लेषण की राजनीतिक परिचर्चा पर हावी थीं, अब वो कुछ हद कमज़ोर हो गई हैं. ख़ास तौर से राष्ट्रीय राजनीति की दशा दिशा को समझने में उन बातों की अहमियत ख़त्म हो गई है. आज जब भारत अपनी आज़ादी के 75 वर्ष पूरे होने का जश्न मना रहा है, तो हम तेज़ी से बदल रहे इस राजनीतिक परिदृश्य में, देश के लोकतंत्र को उसका वर्तमान स्वरूप देने में राजनीतिक दलों की भूमिका का मूल्यांकन कर रहे हैं. बिना राजनीतिक दलों के आधुनिक लोकतंत्र की परिकल्पना करना नामुमकिन है क्योंकि वो तीन अहम क्षेत्रों में जनता और हुकूमत के बीच कड़ी की भूमिका निभाते हैं. सियासी दल, व्यक्तिगत शिकायतों की मतदान के ज़रिए अभिव्यक्ति, राजनीतिक महत्वाकांक्षाएं बढ़ाने का ज़रिया और राजनीतिक समाधान के लिए तमाम वर्गों के हितों के मंच का काम करते हैं.[4,5]

राजनीतिक दलों के अपने संगठनात्मक जीवन होते हैं. लेकिन वो स्थायी पार्टी व्यवस्था भी होते हैं. सियासी दल, व्यवस्था का 'अंग' होते हैं. ऐसे में ज़ाहिर है कि जब व्यवस्था में बदलाव होता है, तो उसका असर 'अंगों' पर भी पड़ता है. ये बात सब मानते हैं कि भारत में दलगत व्यवस्था ने अपने आग़ाज़ के साथ अब तक कम से कम चार परिवर्तन होते देखे हैं. पहली दलगत व्यवस्था (1952-1967) में कांग्रेस सबसे ताक़तवर पार्टी थी जो राष्ट्रीय स्तर के चुनाव के साथ-साथ ज़्यादातर राज्यों में भी जीता करती थी और अन्य दलों पर हावी रहती थी. इसी वजह से उस दौर को 'कांग्रेस व्यवस्था' के तौर पर शोहरत हासिल हुई. दूसरे दौर में, कई राज्यों में कांग्रेस के ख़िलाफ़ विपक्ष का उभार देखा गया, जिससे राज्य की दलगत व्यवस्था (1967-1989) में ध्रुवीकरण होता देखा गया. इस दौर में, वैसे तो कांग्रेस राष्ट्रीय स्तर के चुनाव जीतती रही. लेकिन, राज्यों में ग़ैर कांग्रेसी विपक्षी दल बड़े स्तर पर सीट और वोट जीतने लगे. तीसरे दौर में कांग्रेस के बाद की राजनीति का आग़ाज़ हुआ- एक प्रतिद्वंदी बहुदलीय व्यवस्था (1989-2014), जिसमें राष्ट्रीय स्तर पर भी कांग्रेस का दबदबा नहीं बचा. इस दौर में हमने केंद्र में गठबंधन सरकारें बनती देखीं, क्योंकि कोई एक दल अपने बूते बहुमत हासिल नहीं कर सका था. इस चरण में, राष्ट्रीय राजनीति हो या फिर राज्यों की सियासत, दोनों में राज्य स्तर के दलों की ताक़त और बढ़ गई. देश की मौजूदा दलगत व्यवस्था की शुरुआत 2014 में हुई जब भारतीय जनता पार्टी ने अपने दम पर बहुमत हासिल किया. बीजेपी के 2017 में दोबारा अपने दम पर बहुमत हासिल करने और अपनी पहुंच और बढ़ाने से भारत ने अब एक दल के दबदबे वाले दूसरे दौर में प्रवेश कर लिया है. आज भारतीय राजनीति का पलड़ा

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 5, Issue 6, June 2018

दक्षिणपंथ की तरफ़ इस क़दर झुक गया है कि सियासी रणनीति और दांव-पेंच के मामले में विपक्ष या तो ख़ामोश बैठा है या उसका कोई भी दांव काम नहीं आ रहा है.[6,7]

परिणाम

वो कौन सी वैचारिक रूप-रेखा है जिसके आधार पर भारत में चुनाव लड़े जाते हैं? और किस तरह 'आइडियाज़ ऑफ़ इंडिया' ने देश के राजनीतिक दलों, दलगत व्यवस्था और लोकतंत्र को आकार दिया है? इस मामले में पांच बड़े प्रचलन देखे जा सकते हैं:

1. **भारत की दलगत सियासत** बड़े गहरे स्तर पर वैचारिक है और हुकूमत की सही भूमिका को लेकर मतभेदों ने आज़ादी के बाद से ही देश की दलगत व्यवस्था में बदलावों को प्रभावित किया है. सरकार को सामाजिक व्यवस्थाओं में दख़ल देना चाहिए या नहीं. उसे कमज़ोर तबक़ों से विशेष तरह का व्यवहार करना चाहिए या नहीं. इन जैसे कई मुद्दों को लेकर अलग अलग विचारों की ऐतिहासिक परंपराएं रही हैं. इन विचारों ने ही बीसवीं सदी के आधे हिस्से के दौरान देश की आज़ादी के आंदोलन की दशा दिशा पर अपना असर डाला था.
2. **राजनीतिक दलों के वैचारिक** स्तर पर चलाए गए आंदोलन ने कांग्रेस के प्रभुत्व वाले दौर को बहुदलीय मुक़ाबले में बदला और अब उसी वजह से बीजेपी का एकदलीय दबदबे वाला दौर आया है. इसके चलते न केवल राजनीतिक दलों के भीतर अधिक से अधिक वर्गों की नुमाइंदगी बढ़ी है, बल्कि संसद और राज्यों की विधानसभाओं में भी समाज के तमाम वर्गों का प्रतिनिधित्व बढ़ा है- यानी अधिक ग्रामीण और पिछड़ी जातियों के प्रतिनिधि शामिल हुए हैं. कुछ मामलों में भारत की राजनीति पहले की तुलना में आज अपने सामाजिक ढांचे का काफ़ी हद तक अक़्स बनती दिख रही है. ये विडंबना ही है कि इसी दौरान विधायी संस्थानों के नियमों और काम के तौर-तरीक़ों में भी गिरावट देखी गई है.
3. **इस लंबे ऐतिहासिक संघर्ष में** बीजेपी की मौजूदा जीत उसकी इस क्षमता की कामयाबी है कि वो देश के उन नागरिकों को अपने पाले में करने में कामयाब रही है, जो सामाजिक नियम कायदों में सरकार की दख़लंदाज़ी नहीं चाहते हैं; संपत्ति के वितरण से सरकार को दूर रखना चाहते हैं; धार्मिक अल्पसंख्यकों समेत सभी सामाजिक समूहों को ख़ास पहचान देना चाहते हैं. बीजेपी के समर्थकों में वो लोग भी शामिल हैं, जो लोकतंत्र का मतलब बहुसंख्यक वर्ग के मूल्यों को तवज्जो देना समझते हैं. भारत के स्वतंत्रता आंदोलन की अगुवाई करने और आज़ाद भारत के 75 वर्षों में से तीन चौथाई समय तक राज करने वाली कांग्रेस लगातार हाशिए पर चली जा रही है. कांग्रेस का सामाजिक समर्थक वर्ग और उसका वैचारिक दायरा लगातार सिमटता जा रहा है. इसलिए राजनीतिक मुक़ाबले का उभरता हुआ ढांचा ये संकेत दे रहा है कि आने वाले समय में राष्ट्रीय स्तर पर बीजेपी को किसी ख़ास विरोध का सामना नहीं करना पड़ेगा. हालांकि राज्य स्तर पर बीजेपी के सामने चुनौतियां खड़ी होती रहेंगी.[5,6]
4. **भारत ने देश में दलों के गठन** के कम से कम पांच दौर देखे हैं: आज़ादी के पहले का दौर दलगत व्यवस्था के चार चरण वाले दौर. भारत में राजनीतिक दलों के गठन की प्रक्रिया आसान बनी हुई है और इसी वजह से देश की दलगत व्यवस्था में हर साल (अगर सैकड़ों नहीं तो) दर्जनों पार्टियां शामिल होती हैं. लेकिन इनमें से गिने चुने दल ही बमुश्किल दो चुनावी चक्रों से आगे का सफ़र तय कर पाते हैं. छोटे दल अक्सर अपना विलय बड़ी पार्टियों में कर देते हैं या गुम हो जाते हैं. मतदाताओं के स्तर पर बड़े पैमाने पर उथल-पुछल के बावुजूद राजनीतिक नाम आम तौर पर स्थिर होते हैं और पार्टी के ब्रैंड की अहमियत बनी हुई है. अपने बल-बूते पर निर्दलीय चुनाव जीत पाने वाले उम्मीदवारों की तादाद बहुत कम बनी रहती है. इसी तरह, बहुत से राजनीतिक दल एक दूसरे से काफ़ी मिलते चुलते हैं- फिर चाहे उनका संगठन का ढांचा हो, काम-काज का तरीक़ा, या फिर लोगों को एकजुट करने वाले नारे- ज़्यादातर दलों में आज फ़ैसले लेने की प्रक्रिया केंद्रीकृत हो गई है और चुनाव में उम्मीदवार का प्रचार पार्टी अपने विशाल संसाधनों या राजनीतिक विरासत के बल-बूते पर करती है. राजनीतिक दलों में आलाकमान वाली बढ़ती प्रवृत्ति के भारतीय लोकतंत्र में गंभीर परिणाम देखने को मिल रहे हैं. क्योंकि ऐसे राजनीतिक दल सामाजिक गिले-शिकवों को दूर कर पाने में नाकाम रह जाते हैं. इसका नतीजा ये होता है कि समाज के ये शिकवे सड़कों पर गैर दलीय गोलबंदी के रूप में नज़र आते हैं. इसी तरह भारत के सियासी दल, राजनीतिक गोलबंदी के माध्यम वाली अपनी भूमिका ठीक से निभा पाने में नाकाम रह रहे हैं. आज अलग अलग हित समूहों का व्यापक गठजोड़ बनने के बजाय, ज़्यादादर सियासी दल कुछ ख़ास वर्गों या समाज के सीमित स्तर के नुमाइंदे बनते जा रहे हैं. हालांकि, अपने भीतर इस गिरावट के बाद भी, ज़्यादातर सियासी दल, लोकतंत्र में अपनी कुछ अहम ज़िम्मेदारियां अच्छे से निभा रहे हैं.
5. **आख़िर में, विपक्ष के ख़ेमे में बिखराव** और बीजेपी के दबदबे के चलते, आने वाले वर्षों में देश की सत्ता अधिक रूढ़िवादी और ग्रामीण सामंती वर्ग के हाथों में जा सकती है. सत्ता के इस हस्तांतरण से वैचारिक मतभेद और गहरे होने की आशंका है. इससे सामाजिक नियमों और उदारवादी मूल्यों पर होने वाली परिचर्चाएं आने वाले [4,5]लंबे समय तक और अधिक विवादित बनी रहेंगी. वैसे तो लोकतंत्र के प्रक्रिया के बुनियादी पहलू जैसे कि समय पर चुनाव को तो अभी

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 5, Issue 6, June 2018

ख़तरा नहीं दिख रहा है. लेकिन लोकतंत्र के दूसरे व्यापक पहलुओं को निश्चित रूप से नुक़सान होगा, और इसी मामले में भारत के लोकतंत्र की नए सिरे से परिकल्पना करने में राजनीतिक दलों की भूमिका और भी अहम हो जाती है.

निष्कर्ष

ऐसे में सवाल ये है कि हम अपनी सियासत के उभरते विरोधाभासों को कैसे समझें: एक मज़बूत प्रतिद्वंदी राजनीतिक व्यवस्था जहां राज्य स्तर के दल विधानसभा के अहम चुनाव जीतें और एक सक्रिय नागिरक समूह जो बीजेपी के वैचारिक दबदबे के बीच सड़कों पर उतरकर विरोध प्रदर्शन करे? और हम उस विरोधाभास की व्याख्या कैसे करें, जहां एक तरह ज़्यादातर सियासी दलों का एक संगठन के तौर पर पतन होता जा रहा है और उन पर आलाकमान वाली केंद्रीकृत व्यवस्था हावी होती जा रही है. वहीं दूसरी ओर, यही राजनीतिक दल हाशिए पर पड़े समूहों की नुमाइंदगी करने जैसे लोकतांत्रिक परिणाम देने की अहम भूमिका भी निभा रहे हैं.[3,4]

इसमें कोई दो राय नहीं कि **भारत का लोकतंत्र अपने आप में अनूठा है**. ये संस्थागत ढांचे का एक नतीजा भी है और समाज में गहरी जड़ें जमाए बैठी विरोधाभासी ताक़तों के दबाव में अचानक पैदा हुआ परिणाम भी है. भारत के राजनीतिक दल इन सामाजिक ताक़तों के लिए एक मंच का काम करते हैं- हालांकि उनका रिकॉर्ड बहुत अच्छा नहीं रहा है. वो कुछ अपनी भूमिकाओं में तो सफल रहे हैं और कुछ में नाकाम भी रहे हैं. इन सियासी दलों का लचीलापन और फ़ुर्ती से ख़ुद को नए हालात के हिसाब से ढाल लेने की ख़ूबी रोज़मर्रा की राजनीति को ऊर्जावान बनाए रखती है. भारत में सियासत का रोज़मर्रा की बात होना और नेताओं की उद्यमिता वाली भावना किसी भी राजनीतिक संस्कृति का दबदबा स्थायी बनाने से रोकने का काम करेगी. इसके अलावा भारत की सभ्यता वाली विविधता का मतलब ये है कि कोई भी चुनावी बहुमत स्थायी नहीं है और न ही कोई वैचारिक दबदबा हमेशा क़ायम रहने वाला है. भारत के इस विविधता भरे ढांचे में लगातार होने वाले बदलावों से, एक दूसरे के विरोधाभासी नतीजे निकलते रहेंगे, और ये परिणाम ही हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था में संतुलन बनाए रखने का काम करेंगे.[7]

संदर्भ

1) वाई. एस. राजशेखर रेड्डी - आंध्र प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री.
2) वाई. एस. जगन मोहन रेड्डी, स्वर्गीय डॉ. वाई. एस. राजाशेखर रेड्डी के पुत्र - आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री
3) वाई. एस. विवेकानंद रेड्डी, स्वर्गीय डॉ. वाई.एस. राजाशेखर रेड्डी के भाई - पूर्व सांसद कडप्पा, वर्तमान एमएलसी आंध्र प्रदेश
4) वाई. एस. विजयम्मा, स्वर्गीय डॉ. वाई. एस. राजशेखर रेड्डी की पत्नी - विधायक पुलिवेंदुला, आंध्र प्रदेश
5) पी. रवींद्रनाथ रेड्डी, स्वर्गीय डॉ. वाई. एस. राजशेखर रेड्डी के बहनोई - मेयर कद्दू, आंध्र प्रदेश
6) "संग्रहीत प्रति". मूल से 13 दिसंबर 2017 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 13 दिसंबर 2017.
7) ↑ https://www.graitkashmir.com/news/kashmir/omar-abdullah-is-vice-president-of-national-conference/287351.htm
8) Miller, David (2016), "Political philosophy", Routledge Encyclopedia of Philosophy (1 संस्करण), Routledge, आई°ऍस°बी°ऍन° 978-0-415-25069-6, डीओआइ:10.4324/9780415249126-s099-1, अभिगमन तिथि 2017-10-09
9) Elements of Political Science (1906)